3.3.2.1 Research Paper Published in UGC Approved Journals

ISSN : 2348-7143 RESEARCH JOURNEY International Multidisciplinary E-Research Journal
Jan. 2020 *Impact Factor (SJIF) - 6.625* | *Special Issue 214 (B) :* हिंदी साहित्य : विविध विमर्श

कुसुम अंसल की कविताओं में नारी विमर्श

प्रा. डॉ. अनंत भालचंद्र पाटील
सी. गो. पाटील महाविद्यालय
साक्री, ता. साक्री, जि. धुळे.

प्राचीन काल से ही नारी शोषण का शिकार बनी हुई है। भारतीय पुरुष प्रधान संस्कृति में नारी को गौण स्थान दिया है लेकिन उनकी स्थिती पश्चिमी नारी से भिन्न हैं। आजादी के बाद उसे वैधानिक समानाधिकार मिले जिससे असे परिवर्तन की पार्श्वभूमि मिली। सन १९६० के बाद स्त्री-विमर्श पर काफी मात्रा में लेखन कार्य हुआ, फिर भी आजकी शिक्षीत - अशिक्षीत नारी पुरुष की समर्पिता बनने में ही अपने आप को धन्य मानने लगी है। नारी मुक्ती आंदोलन तथा अंन्तर्राष्ट्रीय महिला वर्ष (१९७५) के बाद भी आज भारतीय नारी सही हालत में आजाद नजर नही आती है। नारी जिवन की मजबुरी, आर्थीक विपन्नता की मनोवृत्ति और पुरुषों के रक्षाकवच के कारण नारी के सामनें आज अनेक- सी समस्याएँ खडी हो रही है।[१]

वैदिक काल नारी के अस्मीता, अस्तित्व, अधिकार एवं सम्मान की दृष्टि से स्वर्णकाल था किन्तु उत्तर वैदिक काल सें नारी की स्थिति में शनै: शनै: गिरावट आती गई। उसका स्वतंत्र अस्तित्व समाप्त होता गया और अन्तत: वह पुरूष की सम्पति, पुरूष की- कामक्रिडा की वस्तु अथवा भोग्या के रुप में सिमटकर रह गई। डॉ. अवस्थी- 'स्त्री की आँखों से देखना, अपने परिवेश, परिस्थिती सें, व्यक्ति से प्रभावित अनुभूत जीवनानुभव को, सत्यानुभव को, भोगे हुए सुख-दु:ख को शब्दांकित करना यही स्त्रीवादी साहित्य कहलाता है।[२]'

स्त्रीवादी साहित्य में अनुभूति की प्रामाणिकता अधिक है, क्योंकि इसमें केंद्र में स्त्री है। इस स्त्रीवादी साहित्य की विशेषता पुरुष प्रधान संस्कृती के कारण स्त्री पर होणे वाले अत्याचार, अज्ञान, स्त्रीमन की कुंठा और आक्रोश, संघर्ष, व्यथा, संवेदना, तनाव एवं अधिकार के किए लडना आदि को लेकर लेखन कार्य ही स्त्रीवादी साहित्य है।

आज की नारी मानसिक या बाह्य दृष्टि सें कितनी ही प्रभावशाली या प्रगतीशिल बने परंन्तु प्राचीन मानदंड या संस्कारो सें वह मुक्त नही हो पायी, जैसी की - वैसी जुडी हुई है। आधुनिक और प्राचीन दो पाटों कें बीच आनाज की तरह वह पिसती जा रही है। सामाजिक, राजनीतिक, शैक्षणिक और आर्थिक परिवर्तन सें इस दौर में नारी अपनी पहचान बनाने में कामयाब हो गई है। तमाम कोशिशों, संघर्षो और दावों के बावजुद असकी स्थिती करुणाजनक दिखाई देती है। परिवार में मिल रही जडता, संत्रास, घुटन, ऊब, अपमान एवं जीवन की भयानक जटिलताओं से वह बाहर निकलना चाहती है, सांस लेना चाहती है। कुसुमजी की कविताओं में जीवन की इन्ही दशाओं का सुक्ष्म अंकन मिलता है। उन्होने अपने साहस एवं आत्मविश्वास की जादुई शक्ति से काव्य जगत में नए प्रतिमान स्थापित किए है। उनकी रचनाओ में चिन्तन और जीवनानुभव एक साथ - जुडे हुए है।

बीसवी सदी के अंतिम दशक के हिन्दी उपन्यांस कारो की सूची में कृष्णा सोबती, मन्नु भंडारी, उषा प्रियंवदा, नासिरा शर्मा, मैत्रिय पुष्पा, अल्का सरावगी, राजी सेठ, दीप्ती खंडेलवाल, मालती जोशी, चित्रा मूदगल आदि के साथ जुडनेवाला एक अहम नाम है कुसुम अंसल का जिन्होनें साहित्यिक अभिव्यक्ति, सामाजिक रुढियाँ, कुप्रथाओं एवं विसंगतीयो कें प्रति विद्रोहात्मक अभिव्यक्ति की है।

कुसुम जी ने अपनी कविताओं में अपने अन्तर्मन की व्यथाओं को वाणी दी हैं। वह एक संवेदनशील कवयित्री है। 'मौके के दो पल', 'धुएँ का सच', 'विरूपीरा', 'मेरा होना' यह चार कविता संग्रह उनके प्रकाशित हैं। अपनी कविताओं के बारे में कुसुम जी लिखती हैं - 'मेरी कविता और कुछ नहीं एक निरंतर संवाद हैं अपने से अपने बीच, मन और जीवन के बीच एक भावना को पकड.पाने का प्रयास हैं।'[३]

'कुसुम अंसल की कविताएँ एक ऐसे संवेदनशील मन की विकृतियाँ हैं, जिसका केन्द्रीय बिंदु सतत तलाश में जूझता है। यह तलाश जीवन की सार्थकता की तलाश हैं, जिसमें भौतिक तृप्ति या अतृप्ति की संगति बहुत पीछे छूट जाती है क्योंकि हर प्राप्ति जीवन के अभाव को और गहरा जाती हैं और हर अप्राप्ति संवेदना की अनेक मुंदी-छिपी परतों को भेदती हुई अनुभूति की अतल गहराइयों में प्रवेश पाती रहती हैं। उनकी कविताएँ मानवीय सम्बन्धों के आत्मीय संदर्भों को केवल उभारती ही नहीं, बल्कि बदलते परिवेश में सम्बन्धों और उनसे जुडी हुई परंपरागत मानसिकता के खोखले और विद्रुप होते चले जाने की नियति को अपनी संपूर्ण सहजता और सादगी से उजागर कर देती है।'[४]

अन्य साहित्य की तरह कुसुम जी की कविताएँ उनके अन्तर्मन की व्यथाओं तथा समाज द्वारा किये जा रहे अत्याचार को प्रकट करती हैं। उन्होंने, वास्तविक धरातल पर कविताएँ लिखी हैं। आज के इस भुमंडलीकरण के दौर में स्त्रियां हर क्षेत्र में अपना स्थान बना रही हैं। परन्तु कुसुम जी ने एक अलग ही स्त्रियों की दुनिया दिखाई हैं। जहाँ आज भी स्त्री पुरूषों के द्वारा ही नहीं बल्कि स्त्री द्वारा भी प्रताडित की जा रही हैं। जिन धर्मालयों में हम श्रद्धा से सर झुका कर विश्व कल्याण की प्रार्थना करते हैं, वही नारी को किस प्रकार प्रताडित किया जा रहा हैं, इन सब का एक यथार्थ चित्र कुसुम जी की कविताएँ प्रस्तुत करती हैं।

'पां...ए भेंट' कविता संग्रह में 'वृंदावा' से छ: कविताएँ संकलित है। इनके अतिरिक्त 'वृंदावन और हम', 'वृंदावन की गोपी', 'मेरे बाके बिहारी' आदि भी हैं। कुछ दिन तक कुसुम जी वृंदावन में रही थी। वहाँ उन्होंने 'विधवा-आश्रम' देखा था। वहाँ रह रहीं विधवाओं की स्थिति को उन्होंने बहुत नजदीक से देखने का प्रयास

किया। उन पर हो रहे अत्याचारों की पीडा को महसूस किया था। ये सब अनुभव लेखिका ने अपने इस संग्रह में बडी मार्मिकता के साथ दिखाया।

एक धर्म की नगरी में जहाँ श्रीकृष्ण ने राधा को एक उच्च स्थान पर बैठाया था, वहीं आज स्त्रियों पर घोर अत्याचर किया जा रहा हैं। एक अमानवीय बर्ताव उन विधवाओं के साथ किया जा रहा है। कुसुम जी ने बडी निर्भिकता के साथ इन सब शोषणों का पर्दाफाश कविता संग्रह में किया है।

विरूपीकरण :

इस कविता संग्रह में कुसुम जी ने नारी के अन्तर्मन को उभारने का प्रयास किया है। स्त्रियों का मनोवैज्ञानिक चित्र प्रस्तुत करने का एक सफल प्रयास कुसुम जी ने किया है। इन कविताओं में उन्होंने सामंती मूल्यों स्त्री-पुरूष सम्बन्धों से जुडे .प्रश्नों को अत्यंत तीखे, खुले साहसपूर्ण ढंग से प्रस्तुत किया हैं। पुरूष सत्तात्मक समाज में एक नारी किस प्रकार अपने 'स्व' को बचाने की कोशिश करती हैं इसका उल्लेख इन कविताओं में हुआ हैं।

इन पुरूष प्रधान समाज से नारी खुद को मुक्त कर लेना चाहती हैं। परन्तु यह इतना आसान नहीं है फिर भी कुसुम अंसल की कविताएँ उन स्त्रियों को आगे बढने का मार्ग प्रशस्त करती है। कभी-कभी लगता हैं जैसे ये छटपटाहट स्वयं कुसुम जी की है क्योंकि वे भी 'मिसेज अंसल' के लेबल से नहीं 'कुसुम' नाम से पहचान बनाना चाहती है।

संदर्भ सूची :

१. बीसवी सदी के अंतिम दशक के हिंन्दी उपन्यासों का प्रवृत्तिमुलक अनुशिलन - डॉ. क्षितीज यादवराव धुमाळ, पृ. १५९.
२. राष्ट्रवाणी द्वैमासिक- पृ. ३८.
३. धुएँ का सच, कुसुम अंसल, मुखपृष्ठ से उद्धृत.
४. वाडमय-कथाकार कुसुम अंसल विशेषांक, सं. एम. फिरोज अहमद, पृ. २६.

RESEARCH JOURNEY International Multidisciplinary E-Research Journal ISSN : 2348-7143
Impact Factor (SJIF) - 6.625 | Special Issue 232 : २१ वीं शताब्दी का हिंदी उपन्यास साहित्य February 2020

कुसुम अंसल के उपन्यास में मूल्यविहिनता : 'एक और पंचवटी' के विशेष संदर्भ में

प्रा. डॉ. अनंत भालचंद्र पाटील
सी. गो. पाटील महाविद्यालय, साक्री, ता. साक्री, जि. धुळे.

प्रस्तावना :

कुसुम अंसल एक प्रतिभासंपन्न कथाकार है। कविता, कहानी, उपन्यास, नाटक, यात्रा वृत्तांत और आत्मकथा सभी क्षेत्रों में इन्होंने अपने अद्भूत कौशल का परिचय दिया हैं। कुसुम अंसल ने अभिजात्य वर्ग की मानसिकता को बडी भरी गहराई और सूक्ष्मता से अपनी रचनाओं में उकेरा हैं। ये अधिकतम नये धन से पनपे परिवारों की मूल्यविहीन, उथली मानसिकता को अपने लेखन का विषय बनाती है। लेखिका अपने लेखन पर रविंद्रनाथ टैगोर, महादेवी वर्मा, अज्ञेय, निर्मल वर्मा तथा अंग्रेजी के उपन्यासकार मिलान कुंद्रा का प्रभाव स्विकार करती हैं। यह इनके प्रिय साहित्यकार हैं। लेखन में अंसल जी भावुकता के स्थान पर बौद्धिकता को अधिक महत्त्वपूर्ण मानती है। आपका कहना है कि, एक सफल रचनाकार के लिए यह बहुत जरूरी हैं कि वह अपने युग और समाज के साथ चले।

नारी के स्वतंत्र व्यक्तित्त्व को गौरवमयी बनाने में हिंदी उपन्यास साहित्य की महत्त्वपूर्ण भूमिका रही हैं। प्रतिव्रता नारी, नारी का त्याग, बलिदान जैसे महान गुणों को प्रस्तुत करना हिंदी की आरंभिक महिला लेखिकाओं का लक्ष्य था। वर्तमान युग में महिला उपन्यासकारों की रचनाओं में बदलाव स्पष्ट रूप से दिखाई देता हैं। ''नारी पुरूष के बदलते सम्बन्धों, कामकाजी नारी, नारी की तनावग्रस्त मानसिकता एवं मुक्ति की कामना को महिला उपन्यासाकारों ने अत्यंत सुक्ष्मता एवं मार्मिकता के साथ चित्रित किया हैं।''[१] आज भारतीय नारी अपने अधिकारों के प्रति काफी सजग हो गई है, यह उनमें आये हुए बदलाव का ही परिणाम है।

धन से पनपे परिवारों की मूल्यविहिनता :

'मूल्य' शब्द संस्कृत से हिन्दी में प्रविष्ट हुआ है। अत: इस तत्सम शब्द की उत्पत्ति संस्कृत के 'मूल' धातु में 'यत्' प्रत्यय जुड़ने से हुई है, जिसका अर्थ है, किसी वस्तु के विनिमय में दिया जाने वाला धन, कीमत, मजदूरी और बाजारभाव आदि। अर्थात मूल्य शब्द का प्रयोग अर्थशास्त्रीय दृष्टि से इसी प्रकार किया जाता है। हिन्दी विश्वकोश के अनुसार - 'मूल्य' ''किसी वस्तु के बदले में मिलने वाली कीमत (धन) के रूप में प्रकल्प किया जाता हैं।''[२]

'मूल्य' शब्द अंग्रेजी भाषा के शब्द का पर्याय है। लॅटिन शब्द से निर्माण हुआ है। का अर्थ है उत्तम या सुंदर। ''मूल्य शब्द के अर्थ में शिवम् और सुंदरम् निहित रहते हैं।''[३] अर्थात सौदर्यशास्त्र और अर्थशास्त्र के साथ उपयोगित्व को मूल्य कहा जाता है। साहित्य का निर्माता मुनष्य होने के कारण मानव जीवन को केंद्र मानकर साहित्य का सृजन किया जाता है। जीवनमूल्य और साहित्य का अटूट सम्बन्ध हैं। विशिष्ट सिद्धांतों पर खड़ी होनेवाली जीवन प्रणाली को ही जीवनमूल्य कहा जाता है। बढ़ता हुआ यांत्रिकीकरण, वैज्ञानिक अविष्कार, महँगाई और आबादी के कारण मानव की मनोवृत्ति आत्मकेन्द्रित होते चली गयी, आत्मिय सम्बन्ध टूटने लगे, परिणामत: संयुक्त परिवार बिखर गये। राहुल भारद्वाज के मतानुसार - ''अब संयुक्त परिवार के स्थान पर परिवार की अवधारणा संकुचित होकर केवल पति-पत्नी और बच्चों में सिमट गई हैं। मूल्य विघटन के कारण इस प्रकार के परिणाम भी टूट रहे हैं।''[४]

विवाह संस्था में भी मूल्य विघटन आ गया है।

''दूसरी ओर आज सम्बन्धों में आत्मीयता का महत्त्व नहीं रहा, मूल्यों का अवमूल्यन होने लगा, वैयक्तिक, पारिवारिक, सामाजिक एवं राष्ट्रीय धरातल पर मूल्यों की चर्चा केवल दिखावा रह गई, आज का मनुष्य केवल बाहरी दुनिया में ही रममाण होने लगा, मानवी सम्बन्धों में घ्कामङ और 'अर्थ' को बढ़ावा मिलने लगा, व्यक्ति में आत्मकेन्द्रितता बढ़ती रही, बेकारी, भ्रष्टाचार ने मुनष्य को अराजक बनाया, इससे सभी स्तरों में तेज गति से मूल्य विघटन होने लगा।''[५]

''मानवीय मूल्य मानव के परिवेश, संस्कृति और भौगोलिक स्थिति आदि से प्रभावित होते हैं। मूल्य स्थायी नहीं होते उनमें युगानुरूप परिवर्तन होते है।''[६]

कुसुम जी ने धन से पनपे परिवारों की मूल्यविहिनता का बड़े मार्मिक ढंग से वर्णन किया हैं। पूँजीपति वर्ग के लोग अनहोनी को होनी में बदलने की क्षमता रखते है। रूपयों के बल पर वे सब कुछ कर सकते हैं, सत्ताधारियों को अपने वश में कर के राजनीतिक दाव-पेंच भी खेलते है। इस वर्ग के लोग अर्थ केन्द्रित होते है, रिश्ते-नातों में भी रूपया इनकी दृष्टी से बड़ा है। इनके पीछे पड़कर वे अपना परिवार, पत्नी, बच्चे सभी को भूल जाते हैं। 'ना बाप बड़ा ना भैय्या, सबसे बड़ा रूपय्या' इतना रूपयों को महत्त्व देते हैं।

कुसुम जी का 'एक और पंचवटी' पाठकों को सोचने पर मजबूर कर देता है। एक ओर हम जहाँ सभ्यता, संस्कृति और नैतिक मूल्यों पर बातें करते हैं, दूसरी ओर उपन्यास की नायिका साधवी हमारे सारे संस्कार, नैतिकता को भूलकर अपने जेढ़ विक्रम के साथ शारीरिक सम्बन्ध स्थापित करते हुये एक पवित्र रिश्ते को कलंकित करती है।

आज विवाह संस्था भी टूटने के कगार पर खड़ी है। साधवी एक आदर्श भारतीय पत्नी के समान संयुक्त परिवार को संभालने वाली एक शिक्षित नारी है। वह हर तहर से पति का साथ देते हुए स्वतंत्र रहना चाहती है। वह सोचती है - ''क्या अपने पति के साथ अलग एक छोटे से घर की कल्पना करना जुल्म है ? उस अलग घर में हम दोनों होते।''[७] साधवी और यतीन के रिश्तों में तनाव का मुख्य कारण है यतीन की साधवी के प्रति उदासिनता।

यतीन का अपनी पत्नी साधवी को वक्त न दे पाना, दिन-प्रति-दिन अपने काम में व्यस्त रहना, परिणामस्वरूप साधवी अपने

गृहस्थ जीवन से तंग आकर यतीन के बड़े भाई विक्रम के व्यक्तित्व की ओर आकर्षित हो जाती है। और यतीन का घर छोड़कर मायके जाने पर अपने भाई जीवन और उसके दोस्त गुरूमीत के साथ फिल्म देखने जाती है, तब माँ उसे डाँटते हुये कहती है - ''अरे माँग में सिंदूर डाल, बिंदी भी लगा ले, ऐसे फिरती है तू जैसे अनब्याही है।''[८]

साधवी विवाहित होन के बावजूद भी पति की बेरूखी के कारण विवाह संस्था को ठूकराती है। इसके लिए जिम्मेदार यतीन की लापरवाही है। साधवी के इस बर्ताव में पाश्चात्य संस्कृति का प्रभाव दिखाई देता है। आज महानगरों में ज्यादातर धनिक परिवारों में रिश्ते-नातों के मूल्य टूटते हुये दिखाई दे रहे हैं।

भारत देश में वैदिक युग से लेकर वर्तमान युग तक विवाह सबसे पवित्र धार्मिक संस्कार माना जाता है। अग्नि को साक्षी मानकर पति-पत्नी द्वारा लिये गये सात फेरे मानों उनका जन्म जन्मांतर का बंधन है। लेकिन वर्तमान युग की नारी इसी बंधन से मुक्ती चाहती है। आज पाश्चात्य संस्कृति के प्रभाव के कारण विवाह संस्था लड़खड़ा रही है। जिस विवाह को मानों सात जन्मों का सम्बन्ध मानते थे, वह आज केवल एक समझौता मात्र रह गया है। ''नैतिकता के नये बोध ने यौन-शुचिता की धारणा को नकार कर काम को मात्र एक दैहिक-जैविक आवश्यकता के रूप में स्वीकार है। इस दृष्टि ने प्रेम और विवाह की परम्परागत धारणाओं को समाप्त कर दिया।''[९]

''साहित्यकार स्रष्टा ही नहीं, द्रष्टा भी होता है। उसकी सूक्ष्म दृष्टि गहराई में उतरकर एक माहिर गोताखोर की तरह मोती चुनकर लाती है। अंधकार में भी प्रकाश के बिंदु तलाशती है। काँटों में भी फूलों को हँसता हुआ देखती हैं।''[१०]

साधवी के माध्यम से कुसुम जी ने नैतिक मूल्यों का ऱ्हास, महानगरीय नारी का अकेलापन, उसकी त्रासदी तथा नारी मूल्य विघटन का चित्रण किया हैं।

निष्कर्ष :

पाश्चात्य संस्कृति के प्रभाव के कारण परंपरागत मूल्य अर्थ हीन साबित हो रहे है। मंजुला गुप्ता के अनुसार - ''आज के व्यक्ति का अहम् सर्वत्र पुरातन परंपराओं, सामाजिक मान्यताओं, रूढ़ियों और नैतिक बन्धनों के प्रति आक्रोश ओर विद्रोह की भावना प्रकट कर रहा है, तथा परंपरागत सामाजिक मूल्यों और रूढ़ियों का विघटन हो रहा है।''[११] साधवी का अपने जेठ से अनैतिक सम्बन्ध प्रस्थापित करना नैतिक मूल्यों को तोड़कर समाज को खुली चुनौती देना हैं, इससे नारी मूल्य विघटन का बढ़ावा मिल रहा है।

संदर्भ ग्रंथ :

१. हिन्दी के समकालीन महिला उपन्यासकार. डॉ. एम. वेंकटेश्वर, पृ. २९
२. हिंदी विश्व कोश, प्र. सं. १९६७- पृ.२८९
३. हिंदी उपन्यास और जीवन मूल्य, डॉ. मोहिनी शर्मा, पृ.१
४. हिंदी उपन्यास और जीवन मूल्य, राहुल भारद्वाज, पृ.१
५. आठवे दशक के हिन्दी उपन्यासों का मनोवैज्ञानिक अध्ययन, अनिल कुमार पृ.११
६. मूल्य: संस्कृति, साहित्य और समाज, रत्ना लाहिडी, पृ.१९
७. उसकी पंचवटी, कुसुम अंसल, पृ.१२३
८. वही पृ.८३
९. समकालीन साहित्य चिंतन, लेख समकालीन हिंदी कहानी मुद्राएँ और संशिष्ट रचनाकार, सं. डॉ. रामदरश मिश्र, डॉ. पुष्पलाल सिंह, पृ.१३८
१०. कुसुम अंसल का कथा साहित्य, डॉ. नगमा जावेद मणिक, अभिव्यंजना, प्र. दिल्ली प्र. सं.१९९९, पृ.१०५
११. हिंदी उपन्यास- समाज और व्यक्ति का द्वन्द्व, डॉ. मंजुला गुप्ता, पृ.१२